समर्पण

समर्पण

रमेश पोखरियाल 'निशंक'

विनसर पब्लिशिंग कम्पनी
देहरादून

समर्पण

: **रमेश पोखरियाल 'निशंक'**

संस्करण	:	प्रथम, 2005
ISBN	:	81-86844-01-9
मूल्य	:	Rs. 150/-
प्रकाशक	:	**विनसर पब्लिशिंग कम्पनी** प्रथम तल, नैथानी काम्प्लेक्स 120, डिस्पेन्सरी रोड, देहरादून-248001
शब्द संयोजन	:	विनसर कम्प्यूटर्स 56/6 कैनाल रोड, जाखन देहरादून दूरभाष : 3094463
वितरक	:	मलिका बुक्स 348 मेन रोड, संत नगर (बुराड़ी) दिल्ली-110084 दूरभाष : 27612927
मुद्रक	:	एलाइड प्रिन्टर्स देहरादून

K------------------- Price : Rs. 150/

समर्पण

भारत माँ के बलिदानी पूत, जिन्होंने गुलामी की जंजीरों में
जकड़ी माँ को मुक्त करने एवं सम्मान को बढ़ाने के लिये
सुख-सुविधा एवं महत्वकांक्षाओं को तिलांञ्जलि देकर
अपने जीवन की आहुति ही नहीं दी, बल्कि सम्पूर्ण
परिवार को भी भारत माँ की बलिवेदी पर
न्यौछावर कर दिया, सिर पर कफन
बांधे जिनके कदम विपरीत परिस्थितियों
व कण्टकाकीर्ण मार्ग में भी आगे
ही बढ़ते रहे, जिन्होंने हंसते-हंसते
फाँसी के फंदों को चूमना तो
स्वीकार किया किन्तु
गुलामी स्वीकार नहीं की

ऐसे

आजीवन संघर्ष करने वाले उन
मातृ सपूतों की पुण्य पवित्र
स्मृति में देश के कर्णधारों
एवं पुण्य पवित्र भारत माँ
के पूज्य पादों में
मेरा यह 'समर्पण'
समर्पित
है।

रमेश पोखरियाल 'निशंक'

भूमिका

जननी और जन्म भूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है। जननी के पश्चात् नवजात शिशु की दूसरी ममत्व स्थली उसकी जन्म भूमि ही होती है। जन्म भूमि में ही उसे अपनत्व का आभास होता है। इसलिए उसे अपनी मातृभूमि से ममत्व होगा ही। इस ममत्व की प्रधानता मानव में ही नहीं, संसार के समस्त भूत प्राणियों में होती है। जननी और जन्म भूमि का अलौकिक प्रेम ही विराट रूप से देश और विश्व का प्रेम बन जाता है। देश प्रेम मानव का सर्वोत्तम गुण है। क्योंकि मानव इस निश्छल प्रेम में अपने 'स्व' स्वार्थों से ऊपर उठकर देश और विश्व मानव के कल्याण के लिए अपना सब कुछ अर्पण करने के लिए तत्पर रहता है। इस प्रेम के फलस्वरूप ही धरती के लाल अपनी मातृभूमि की रक्षा में तत्पर अपने शीश तक को न्यौछावर कर देते हैं। जहां वह एक ओर अशान्ति के समय अस्त्र-शस्त्रों से विभूषित मातृभूमि की सीमा में खड़ा माँ की रक्षा के लिए तत्पर रहता है, वहीं शान्ति के समय वह माँ के गौरव के लिए अपना तन-मन-धन माता के चरणों में बलिदान कर देता है। वास्तव में जीवन को सफल करने वाले मानव कम ही हुआ करते हैं। मानव जीवन की सफलता इसी में है कि वह अपने जीवन का सर्वस्व मातृभूमि को अर्पित कर दे।

कविवर श्री रमेश पोखरियाल 'निशंक' का राष्ट्र प्रेम उनकी कविताओं में मुखरित होता है। वास्तव में अगर किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की असली छाप कहीं देखनी हो तो उसके द्वारा व्यक्त भाव

ही उसके जीवन की खुली पोथी हैं। कवि 'निशंक' अपनी मातृभूमि के लिए अपना तन–मन–धन न्यौछावर करना चाहता है। कवि के अन्दर की त्याग भावना ही उसके व्यक्तित्व की स्पष्ट छाया उसकी कृति के ऊपर छोड़ गयी है। कवि अपने राष्ट्र गौरव से भली भांति परिचित है। उसे मालूम है कि हमारा अतीत क्या था। हमारा वर्तमान कैसा है और हमारा भविष्य कैसा होना चाहिए। वास्तव में सच्चा मानव वही है जिसे अपने जीवन की सार्थकता का आभास हो। कवि 'निशंक' के मानस पटल में भारत माता की मूर्ति स्थापित हो चुकी है। इसीलिए न तो उसको ध न–दौलत की चाह है और न ही अमरत्व की। उसकी इच्छा तो यही है कि उसे एक बार भारत माता की पद–धूलि मस्तक पर चढ़ाने के लिए मिल जाए। कवि को ज्ञात है कि धन से धर्म नहीं खरीदा जा सकता है। धर्म के लिए आत्मोत्सर्ग की भी आवश्यकता होती है।

'धन दौलत वैभव न मिले माँ,
भारत भूमि की धूलि मिले।
धन से प्यार नहीं होता माँ,
इन सब में हैं शूल मिले।।'

कवि जीवन भर संघर्ष करना चाहता है। उसे इस बात से तनिक भी असंतुष्टि नहीं कि उसको अन्त में जीत मिलती है या हार। उसे संघर्ष करना है चाहे कितनी ही विपत्तियों में क्यों न घिर जाए।

कवि निशंक तो जीवन भर संघर्ष करना चाहता है। 'जीवन भर संघर्ष करूँ माँ, हार मिले या जीत मिले।' बलिदानी पुरुष को आलस्य शोभा नहीं देता है। फिर जिन नौजवानों के कंधों में भारत माँ का भार हो अगर वे भी आलसी हो जायें तो विजयश्री उनका वरण भी कैसे करेगी ?

आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।
करना अब कार्य तुमको महान ।।

कवि राष्ट्र के आदर्श पथ पर बलिदान होने वाले शहीदों को याद करता है क्योंकि बिना प्रेरणा का मानव कुछ भी नहीं कर सकता है। स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने वाले वीरों का एक ही नारा था, करो या मरो।

'प्रात: उठो याद उनको करो ।
था नाद जिनका मारो या मरो ।।
अब तुम भी मिलकर करो इसका गान ।
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

भारत माता अनेक कण्ठों से बोलती है पर उसका स्वर एक है, क्योंकि अनेक कण्ठों से निकलने वाली ध्वनि सर्वत्र ओज का प्रसाद बांटती है। इस ध्वनि में जीवन शक्ति के साथ भविष्य में देश के इतिहास के लिए भी एक प्रेरणा छुपी हुयी है। इस ध्वनि के साथ माँ के चरणों में अनेक शीश अर्पित हो चुके हैं। बलिवेदी पर अर्पित इन शीशों के मध्य कवि अपनी भावनारूपी शीश को अर्पित करने की प्रतिज्ञा करता है। वास्तव में देश सेवा एवं आत्मगौरव के लिए अर्पण होने वाले शीश ही देश की भावी पीढ़ी के लिए अमर स्तम्भ बन जाते हैं।

माँ तुम्हारे शीश अगणित, एक सिर मेरा भी है ।
चरण कमलों में तेरे माँ, एक यह चेहरा भी है ।।
सैकड़ों मस्तक चढ़े माँ मैं भी उनमें एक हूँ ।
चाहता हूँ वन्दनीय माँ क्षण व कण प्रत्येक दूँ ।।

कवि 'निशंक' मां के चरणों में अपना सर्वस्व लुटाना चाहता है। उसके पास एक ही गीत है, एक लय है और एक ही कण्ठ है। परन्तु इस एकत्व को वह सारभौम बनाना चाहता है। मानव को समय की चुनौती स्वीकार करनी चाहिए। चाहे समय उसके अनुकूल हो या प्रतिकूल। परिस्थितियों से लड़ना ही सच्चे मानव का काम है।

समय की चुनौती स्वीकार करो ।
मंजिल तुम्हारे पग-पग में होगी ।।

परिश्रम करना मानव का ही कार्य है। दिन रात परिश्रम करने वाला मानव अन्त में उन्नति के शिखर पर पहुँच जाता है। कवि 'निशंक' इसके अपवाद नहीं है। उन्होंने अपनी इस छोटी सी आयु में जीवन के अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं। सुख-दु:ख उनके चिर सह पर हैं। भयंकर परिस्थितियों में भी उनके सुकुमार मुखड़े पर कभी भी दु:ख ने अपनी प्रतिछाया नहीं छोड़ी। उन्होंने जितना संघर्ष किया, बाधायें उनका साथ नहीं छोड़ती। इन बाधाओं में भी वे अपने अटल संकल्प से कभी भी विचलित नहीं हुए। देश प्रेम उनके जीवन मूल तथा पावन मंत्र है। जिसकी स्पष्ट छाप उनके काव्य में परिलक्षित होता है।

कवि की कविता में कहीं भी आडम्बरों ने अपनी छाया नहीं छोड़ी। उनकी सरल तथा ओजपूर्ण शब्दावली ही मानव के मृतक प्राय: शरीर में नवीन रक्त का संचार करने के लिए पर्याप्त है। कवि ने जिस जन सामान्य की भाषा का प्रयोग किया है वह कवि की कविता के सम्पर्क में आकर निखर गयी है उनकी भाषा में उनके सुकुमार व्यक्तित्व की भांति ही सरलता एवं बोधगम्यता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

कवि के भावों में आदि से अन्त तक देश प्रेम का स्पष्ट पुट है। वे कभी भी कविता की टेड़ी मेड़ी चाल में नहीं पड़े। उन्होंने जो कुछ कहा वह स्पष्ट कहा है अलंकारों का जाल उन्होंने कहीं नहीं बुना। वीर तथा करूण रस ही इस 'समर्पण' काव्य के प्राण तत्व हैं।

'समर्पण' वास्तव में समर्पण ही है। यह समर्पण भारत के योग्य सपूतों का समर्पण है। इसमें काव्य की अजस्व धारा ही भावों को तटों को शस्य-श्यामल बनाती हुई मानव के तृपित हृदय की तृष्णा को शान्त करने में पूर्ण समर्थ है। कवि में कहीं नकलीपन नहीं। उसके जीवन का जो यथार्थ है वह कविता के रूप में मुखरित हुआ है।

कवि की भावनानुकूल कविवर रमेश पोखरियाल 'निशंक' का यह काव्य संकलन 'समर्पण' आज की आवश्यकता है। कवि भविष्य में भी इसी प्रकार के गीत-दान से हिन्दी साहित्य वाटिका में नवीन साहित्य

वल्लरी को पल्लवित पुष्पित करें यही हम ईश्वर से प्रार्थना करते है।

अनेक शुभकामनाओं के साथ

दिनांक–19.5.83 नन्द किशोर ढौंढियाल 'अरूण'
कोटद्वार

हृदय पुकार

प्रत्येक भारतवासी में देष्ज्ञभक्ति कूट-कूट कर भर सके, भारत माँ का हर पूत राष्ट्र प्रेम से ओत-प्रोत हो, यह अत्यावश्यक है। राष्ट्र प्रेम के अभाव में भयंकर दूरगामी परिणाम होते हैं। जिनका मूल्य देश को सदियों तक चुकाना पड़ता है। किसी भी राष्ट्र को परिपुष्टसशक्त व गौरवशाली बनाने के लिए त्याग, साहस, वीरता, नैतिकता, राष्ट्रीयता व समर्पण का भाव होना आवश्यक है। इन भावों की जागृति में राष्ट्रीय गीत एवं कविताओं की प्रमुख भूमिका रहती है। ये गीत व्यक्ति-व्यक्ति को राष्ट्रधारा में ही नहीं जोड़ते बल्कि विपरीत परिस्थितियों में भी मार्ग निकालते हुए राष्ट्र संकट में देशभक्त को बलिदान के लिए प्रेरित भी करते हैं।

बस! हर भारतीय का नाता अपने पूर्वजों एवं देश की माटी से जोड़ता व देश के प्रति मर मिट जाने वाले वीर सपूतों का पुनीत स्मरण कराना ही मेरी इन कविताओं का भाव है।

समय की चुनौतियों को मेरी कवित4ाओं ने स्वीकार किया है। अतः अन्तस्थ से जागृत इस पुकार को जनमानस तक पहुँचा सकूँ इसी विश्वास के साथ मैंने अपनी छिन्न-छिन्न पड़े गीत व कविताओं को 'समर्पण' का रूप दिया।

अपने पूर्वजों के आदर्शों पर चलकर मेरा यह समर्पण राष्ट्र निमार्ण के लिए हर देश भक्त को त्याग व बलिदान के पथ पर प्रेरित कर सके इसी उद्देश्य से समय-समय के अनुभवों की सरल शब्दों में

मेरी अभिव्यक्ति है।

'समर्पण' गुरूजनों एवं सहयोगी बन्धुओं की शुभकामनाओं का साकार रूप है।

पूज्यपाद गुरू आचार्य ब्रह्मानन्द विडालिया व श्रीयुत्त नन्दकिशोर ढ़ौंड़ियाल 'अरूण' के सतत मार्गदर्शन का ही यह सब परिणाम है, मैं उनका आजीवन ऋणी हूँ।

परम श्रद्धेय डा0 नित्यानन्द शर्मा, डा0 केदारनाथ द्विवादी, परमादरणीय राणा प्रतापसिंह जी, श्रीयुत्त कविवर कमलसाहित्यालंकार, पूज्य ब्रह्मदेव शर्मा (भाई जी) का भी वरदहस्त भी मुझे सौभाग्य से प्राप्त हुआ है।

कविताओं को एकत्रित कर उनलको प्रकाशित करने का कार्य कु0 सम्पत्ति नेगी 'संध्या' का एवं भावात्मक सहयोग हेतु आदरणी चम्पतराय तसल, श्री विनोद नौटियाल श्री राजेन्द्र प्रसाद पोखरियाल, श्री विद्यादत्त रतूड़ी, कवि श्री नागेन्द्र ध्यानी व प्रेरणादायी मार्गदर्शन हेतु भाई तरूण विजय जी को मैं भुलाये नहीं भूल सकता।

अग्रज भ्राता शशीकान्त का सौहार्द तथा पूज्य श्री बुद्धिवल्लभ थपलियाल जी का स्नेह भी इस 'समर्पण' के साथ अविछिन्न रूप से जुड़ा है।

श्रीमान वाचस्पति गैरोला, माननीय रामदौर जी व श्री श्यामसुन्दर जी की आत्मीयता के लिए मैं कृतज्ञ हूँ।

पुस्तक के मुद्रण भी नरोत्तम शर्मा ने अपना जो अमूल्य सहयोग मुझे दिया मैं इसके लिए उनका हृदय से आभारी हूँ। अन्त में अपना यह 'समर्पण' नव चेतना संचार हेतु सभी सुहृद पाठकों के हाथ में सौंप रहा हूँ।

1 अप्रैल 1983 **–रमेश पोखरियाल 'निशंक'**

अनुक्रम

खण्ड - १

1.	कण्ठ तेरे हैं अनेकों	18
2.	भारत सपूत	18
3.	समय की चुनौती स्वीकार करो	20
4.	हिन्दू ने कब नरसंहार किया	22
5.	सुख की चाह नहीं	25
6.	भारत की शान	27
7.	धन दौलत वैभव न मिले	29
8.	आज जलकण ही बनें हम	31
9.	जग में भारत देश हमारा	32
10.	यही राष्ट्र है देव सभी का	34
11.	स्वयं जलकर दूसरों को	36
12.	भारत	38
13.	शिक्षा	40
14.	जीवन वीणा	42
15.	आज	44
16.	धधकता हुआ दिल	45

17. जीवन अर्पण 47
18. बिखराव 49
19. वह रसधार नहीं 51
20. एक क्षण भी न थको 53
21. माँ 55
22. सींच लो हृदय कली 57

खण्ड-२

23. बढ़ते कदम 58
24. तर पसीने से बदन था 59
25. प्रियतम दु:ख 61
26. कुछ मेरी भी सुन लो 62
27. हे कली! 63
28. काँटे 65

कण्ठ तेरे हैं अनेकों

कण्ठ तेरे हैं अनेकों, स्वर तुम्हारा एक है ।
स्वर तुम्हारे पूज्यपादों, में भी मेरा एक है ।।
कण्ठ सारे एक होकर, गान तेरा ही करें ।
भू जगत् की पूज्य माता, कष्ट दुःख सब ही हरें ।।
माँ तुम्हारे शीश अगणित, एक सिर मेरा भी है ।
चरण कमलों में तेरे माँ, एक यह चेहरा भी है ।।
सैकड़ों मस्तक चढ़े माँ मैं भी उनमें एक हूँ ।
चाहता हूँ वन्दनीय माँ क्षण व कण प्रत्येक दूँ ।।
एक लय में गीत तेरे सब पुकारे माँ तुम्हें ।
सुरभि अमृत रस बहाते, बांट दो माता हमें ।।
हाथ अनगिन कर रहे हैं, वन्दना माँ की अभी ।
हाथ है उनमें भी मेरे पुत्र तेरे जो सभी ।।
कोटि चरणों से सुशोभित, पूत तेरे बढ़ रहे ।
वत्सले ! मन में बिठाकर, दीप सारे चढ़ रहे ।।
पुष्प मैं हूँ माँ तुम्हारा, तुम इसे स्वीकार कर लो ।
पूर्ण अर्पित बाल तेरा, माँ मुझे अब शीघ्र तर दो ।।

भारत सपूत

मातृ भूमि की इस वेदी पर,
अर्पित अनेक जवानी।
कोटि प्रणाम सपूतों को,
जिनकी यह अमर कहानी।।

जंजीरों में जकड़ी माँ को,
आँख खोल सबने देखा।
तनिक विलम्ब भी होता कैसे,
बदल गयी मस्तक रेखा।।

देखा विपदा में माँ को जब,
त्याग समर्पण भाव जगा।
बलिदानी हर पूत धरा का,
आज हमें सुर-वीर लगा।।

ललक-ललककर कहे कौन है,
जो पीड़ित माँ को करता।
खैर नहीं उस देश द्रोह की,
युग अब धधक-धधक उठता।।

उठे जब वीर भारत भू के,
देश प्रेम को दिया पुकार।
भारत भू की रक्षा करने,
मिटे क्रान्ति में पूत हजार।।

मन्त्र एक था इन वीरों का,
भारत माँ को मुक्त करें।
आज राष्ट्रघाती तत्वों का,
कदम-कदम पर रक्त करें।।

इसी ध्येय को पूरा करने,
मिल प्रयास किया सबने।
बलिदानी भारत माटी है,
इसमें जन्म लिया हमने।।

बैठ रात्रि को हुए इकट्ठा,
कौन यहाँ बलिदानी मौन।
भारत माँ के साहसी बेटे,
बलि वेदी पर चढ़ते कौन।।

भूख नहीं अब प्यास नहीं है।
नहीं श्वास लेंगे तब तक।
काटेंगे माता के बन्धन,
तोड़-मोड़ कर हम जब तक।।

मरे किन्तु मर मिटके बढ़ना,
हर क्षणिक कैसी मानी।
शीश कटा भारत भू में नित,
चल सैन्य अब बलिदानी।।

हर बाधाओं में जीकर हम,
कभी नहीं हिम्मत हारे।
छिली पेशियां माँस उधड़ता,
अडिग रहे फिर भी सारे।।

जूझ रहे, जेलों में तुम सब,
स्वीकारेंगे क्यों? गुलामी।
छोड़ दिए वैभव के सपने,
दांव लगा दी मर्दानी।।

इन्हीं बल वीरों ने तब,
इस माँ का श्रृंगार किया।
प्रत्येक विदेशी भाग गए तब,
माँ को जी भर प्यार किया।।

हृदयंगम कर राष्ट्र भक्ति को,
तुमने माँ सौंपी हमको।
स्वीकारो भारत के वीरों,
श्रद्धांजलि अर्पित तुमको।।

समय की चुनौती स्वीकार करो

समय की चुनौती स्वीकार करो तुम,
मंजिल तुम्हारे पग-पग में होगी ।
यदि दूर मंजिल बहुत पास से हो ।।

करो श्रम दिन-रात क्षणिक न थको तुम ।
वह दीवार तोड़ो बाधक बनी जो,
कदम शीघ्र रखकर शिखर पर बढ़ो तुम ।।

अगर बढ़ सको तो बढ़ो सूर्य से तुम,
सफलता तुम्हारे हर अंग होगी ।
समय की चुनौती स्वीकार करो तुम ।।

कहाँ मार्ग में वे कभी भी बढ़े हैं,
जो लक्ष्य निष्क्रिय फीके पड़े हैं ।
वही मृत्यु पाते जो डरे मृत्यु से हैं,
अमर तो वही जो अडिग पग खड़े हैं ।।

27-03-2008

अडिग दृढ़ डगर पर अगर तुम बढ़ो तो,
अमरता तुम्हारी–सफल शक्ति होगी ।
समय की चुनौती स्वीकार करो तुम ।।

परहित जो सबका नित सोचते हैं,
विपरीत आंधी वही रोकते हैं ।
कहाँ शक्ति उनमें जो जूझे नहीं हैं,
वहीं लिप्त होकर दु:ख भोगते हैं ।।

करो मार्ग प्रशस्त संघर्ष से तुम,
ले राह तबकी छोड़ो लुप्त भोगी ।
समय की चुनौती स्वीकार करो तुम ।।

हिन्दू ने कब नर संहार किया

मानवता का पाठ पढ़ाया, गीता का उपदेश दिया ।
कोई बताये सारे जग में, हिन्दू ने नर संहार किया ।।

इतिहास अमर है इस हिन्दू का, चरित सजल उदार रहा ।
आया जो भी शरण उसे दी, विमल गंग में बिन्दु बहा ।।
सबको भाई समझा इसने, कब किसका अपमान किया ।
कोई बताये सारे जग में, हिन्दू ने नर संहार किया ।।

भू भर में हिन्दू ही त्यागी, छोड़ स्वार्थ सेवा में रहे ।
भारत माँ की सेवा करने, मातृ भक्ति में सभी बहे ।।
मत कहना तुम स्वार्थी इसको, जिसने तन-मन त्याग दिया ।
कोई बताये सारे जग में, हिन्दू ने नर संहार किया ।।

कौन विदेशी कौन स्वदेशी, इस माँ को पूजा सबने ।
मुक्त कण्ठ से गले लगाया भाई बन भाई हमने ।।
बन्धु विश्व को माना हमने, विश्व प्रेम का मंत्र दिया ।
कोई बताये सारे जग में, हिन्दू ने नर संहार किया ।।

आन दिया सम्मान दिया, स्थान उच्च व न्याय दिया ।
भूल गये करतूतें अपनी, शुरू विद्रोह हमसे ही किया ।।
पता नहीं मदमाते पशु को, हिन्दू ने कल्याण किया ।
कोई बताये सारे जग में, हिन्दू ने नर संहार किया ।।

कहाँ रहा कुल में ही सीमित, भू भर को परिवार कहा ।
सुखी किया प्राणी-प्राणी को, स्वयं तो इसने कष्ट सहा ।।
भूल गये जगवासी उसको, जिसने जग का मान किया ।
कोई बताये सारे जग में, हिन्दू ने नर संहार किया ।।

सुख की चाह नहीं

रह-रह कर अब चलने का, नहीं समय है रे वीरों ।
दिखला दो दुनियाँ को पौरूष, पीछे नहीं हटो धीरों ।।

नहीं याद करता उसको जग, जो न कुछ कर दिखलाता ।
जीवन सारा व्यर्थ गुजरता, कायर भी है कहलाता ।।
आज समय ऐसा है जग में, पाप पुण्य से टकराया ।
सही दिशा में जाने वाला, है मानव भी घबराया ।।

श्रेष्ठ मार्ग को अपनाकर अब, हीन भाव त्यागो वीरों ।
रह-रह कर अब चलने का, नहीं समय है रे वीरों ।।

देखो हिंसा पग-पग पर, नहीं सम्भल पाता मानव ।
खुशियाँ खूब मनाता है वह, सुख लेता पग-पग दानव ।।
वह व्यक्ति से वीर बना, जिसने इसका प्रतिकार किया ।
काँटों पर ही चल करके, जग पर जिसने अधिकार किया ।।

आज चुने उस पथ को हम भी, हिम्मत करके रे धीरों ।
रह-रह कर अब चलने का, नहीं समय है रे वीरों ।।

सुख की चाह नहीं उनको जो, कष्टों में भी बढ़ते हैं ।
विपत्तिघोर घनघोर धरा, ध्येय लिए ही चढ़ते हैं ।।
लक्ष्य दूर है उच्च शिखर पर, मार्ग विकट में हैं चढ़ते ।
नहीं देखते बाधाओं को, कदम-कदम पर हैं बढ़ते ।।

हमें लांघना है इन सबको, ध्येय मार्ग लेकर धीरों ।
रह-रह कर अब चलने का, नहीं समय है रे वीरों ।।

भारत की शान

आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ऽ,
करना अब कार्य तुमको महान ।

हे मातृ पुत्रों करो याद तुम ऽऽ,
गये अर मिटे न हुआ नाद गुम,
उठो तुम धरा पर कमर कसने ठान,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

प्रातः उठो याद उनको करो ऽऽ,
था नाद जिनका मारो या तपो,
अब मिलकर सभी करो इसका गान,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

कहाँ रात सोये वे माँ के सपूत,
न सोने दिया जो बने थे कुपूत,
ले व्रत उठो अब भगाओ अज्ञान,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

स्वयं तो जगे थे ये सबको जगाकर,
बढ़े मार्ग में थे ये सबको हटाकर,
बाधा है तोड़ो खड़ी जो चट्टान,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

गाते थे धरती के सभी यू मधुर गीत,
गर्मी हो चाहे विकट क्यों न शीत,
प्रातः करो अब इस माँ को नमन,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

यही गीत सुनकर तो हर जन-जगा,
उद्घोष सुनकर ही दुश्मन भगा,
दीनता को भगाओ करो तुम उत्थान,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

दहकता था हृदय भरतवीरों का,
अब नहीं घाव होता कुटिल तीरों का,
उठो तुम जगो अब भारत की शान,
आलस्य में क्यों पड़े नौजवान ।।

धन दौलत वैभव न मिले

धन दौलत वैभव न मिले माँ, भरत भूमि की धूलि मिले।
धन में प्यार नहीं होता माँ, इन सब में हैं शूलि मिले।।

स्वर्ग भी मुझको नहीं प्यारा,
मुझे गोद माँ की प्यारी।
जिस गोदी में जन्म लिया माँ,
वही स्वर्ग से है–न्यारी।
जीवन भर संघर्ष करूँ माँ हार मिले या जीत मिले।
धन दौलत वैभव न मिले माँ, भरत भूमि की धूलि मिले ।।

तेरा सुख वैभव अपना,
तेरा दु:ख मन की तरंग।
चाहे कितनी विपदाओं में,
छोड़ूँ नहीं माँ तेरा संग।।
आगे बढ़ता जाऊंगा माँ दुनिया तो क्या ब्रह्म हिले।
धन दौलत वैभव न मिले माँ, भरत भूमि की धूलि मिले ।।

तुझे दु:खी नहीं चाहूँगा माँ
व्याकुल है मन भटक रहा।
इस भटकन में मन से पूछो
क्यों माँ का दु:ख खटक रहा।।
अटल हिमालय हिल न सकेगा, चाहे कितने व्यवधान मिले।
धन दौलत वैभव न मिले माँ, भरत भूमि की धूलि मिले ।।

मन में तुम हर क्षण ही रहना,
नहीं छोड़ मुझ को देना।।
बच्चा भूल नहीं सकता माँ,
चिर स्नेह तुमसे लेना।।
चाहे मैं काँटा ही बनूँ माँ नहीं फूल जो स्वर्ग चढ़े।
धन दौलत वैभव न मिले माँ, भरत भूमि की धूलि मिले ।।

आज जलकण ही बनें हम

आज जलकण ही बनें हम, दे सभी को प्राण दान।
एक क्षण भी रूक न पाये, नित बढ़े माता की शान।।

जानते हैं एक जलकण के बिना जीते नहीं।
कौन कह सकता है भू में, हम तो जल पीते नहीं।।
मानते जीवन इसे तो, आज लें इस से ही ज्ञान।
आज जलकण ही बनें हम.. ... .।।

क्या कभी विश्राम करने, एक क्षण भी रूकी।
सोच में ये कब पड़ी है, मैं दुःखी हूँ या सुखी।
भावना परहित की लेकर, हम सभल गायें गान।
आज जलकण ही बनें हम.. ... .।।

आये पर्वत की टक्कर पर, घूम कब पीछे गयी।
जूझती सबसे रही पर, शक्ति दे सबको नयी।
शक्ति पाकर सब बढ़े, परहित बनें न हम अज्ञान।
आज जलकण ही बनें हम.. ... .।।

भाव निश्छल है इसी में, जाति-मत इसमें कहाँ।
ले ग्रहण करता है प्राणी, आवश्यकता हो तो जहाँ।
निम्न ऊँचा, पंथ जाति, तोड़ दें कलुषित चट्टान।
आज जलकण ही बनें हम.. ... .।।

बांध बनकर ये रूकी हैं क्या? कभी किसने सुना।
हित जहाँ प्राणी का होता, मार्ग उसको ही चुना।
लें इसी की प्रेरणा को, सब बढ़ायें इसका मान।
आज जलकण ही बनें हम.. ... .।।

जग में भारत देश हमारा

जग में भारत देश हमारा,
है प्राणों से प्यारा ऽ ऽ ऽ ऽ।
है प्राणों से प्यारा।।

जहाँ देश का श्रृंग हिमालय,
कल-कल गंगा बहती
चट्टानों तूफानों से भी
आगे बढ़ती रहती।।

आज हमें भी आगे बढ़ना,
खूब लगायें नारा।
जग में भारत देश हमारा,
है प्राणों से प्याराऽ ऽ ऽ ऽ।

जहाँ सप्तपुरि ज्ञान कराती,
सबके मन हृदयतम का।
वहीं सप्त सिंधु के जल से,
भारत का कण-कण चमका।।

अब हमें भी सिन्धु बनकर,
परोपकार करना सारा।
जग में भारत देश हमारा
है प्राणों से प्याराऽ ऽ ऽ ऽ,
है प्राणों से प्यारा ।।

जहाँ भरत है बच्चा-बच्चा,
राम-कृष्ण अर्जुन सारे।
जीवन में सच्चाई देखी,
सभी दुष्ट दानव मारे।।

इसी भूमि से प्यार करें हम,
बहे राष्ट्रवादी - धारा।
जग में भारत देश हमारा,
है प्राणों से प्याराऽ ऽ ऽ ऽ।।
है प्राणों से प्यारा।।

यही राष्ट्र है देश सभी का

यही राष्ट्र है देव सभी का, यही पूज्य है हम सबका।
ज्ञान दिया हर प्राण दिया है, सुप्त हुआ था जन कबका।।

भव्य पुरूष बन राष्ट्र खड़ा है, यह ब्रह्म ब्रह्मांड यही।
षड् ऋतु जिसमें स्वर्ग हार है, वेद भूमि भू हार वही।।
वेद ऋचायें अखिल विश्व में, करती दूर हृदय तम का।
यही राष्ट्र है देव सभी का....................................।।

देव कण्ठ में हार रूप है, भारत की अनगिन नदियाँ।
चरण चूमते आया है जग, बीत गयी अनगिन सदियां।
पुण्य करे पावन प्राणी को, एक बिन्दु भी इस जलका।
यही राष्ट्र है देव सभी का.....................................।।

चण्डशक्तिधारी पुरू है यह, इसका कण-कण जन है।
करें अर्चना वन्दना, इसका पल-पल हर मन है।।
नित्य करें पूजन अर्चन सब, यह कर्तव्य है हर जन का।
यही राष्ट्र है देव सभी का....................................।।

सिर पर ताज हिमालय जिसके, पाँव पखारे जल सागर।
मार्ग दिखाकर दुष्ट संहारे, जिसमें नित नटवर नागर।।

कैसा था यह राष्ट्र व्यक्ति भी, नवयुग याद करे तबका।
यही राष्ट्र है देव सभी का....................................।।

देव यही जिसने हंसते ही, हमको शैशव प्यार किया।
ध्यान हटाकर अन्धकार से, जीवन का तब सार दिया।।
यह अज्ञानी आज बना है, दिव्य पुरूष था जो कल का।
यही राष्ट्र है देव सभी का....................................।।

तन–मन–धन कण–कण में भी, पूज्य देव का ध्यान धरें।।
क्षणिक न भूलें राष्ट्र देव को, शब्द–शब्द में गान करें।।
लीन रहे सब भक्त ध्यान में ध्यान रहे अब पल–पल का।
यही राष्ट्र है देव सभी का....................................।।

स्वयं जलकर दूसरों को

स्वयं जलकर दूसरों को, है हमें प्रकाश देना।
मार्ग से भटके पथिक का, हाथ कर में थाम लेना।।

तू दिखाकर हित सिखा दे, और प्रेरित राह दे।
छोड़कर सब स्वार्थ जग के, किन्तु परहित चाह दे।।

अब न कर तू देर क्षण भी, पिघल कर प्रकाश दे।
तू धरा पर फैल इतना, लौ तेरी आकाश ले।।

नित्य जलकर भी तुझे, यदि मूर्ख कोई नोच ले।
चाहता जग है तुझे क्यों, ये भी निश्चित सोच ले।।

चरण तल चाहे अंधेरा, ज्योति दिशि-दिशि भेज दे।
अब हुये निस्तेज जग को, शीघ्र ही तू तेज दे।।

पिघलकर, जलकर, मनुज तू बाड़ ऊंची लांघ दे।
बुझना नहीं मत मंद होना, कुचल तू मदान्ध दे।।

तिमिर कोनों में रहे ना, मात्र इतना ध्यान दे।
तू बुझा अज्ञान को दे, अब नित्य निश्च्छल ज्ञान दे।।

भारत

गगन चुम्बित शिखर जिसके,
जहाँ घिरा प्रलय घेरा।
विश्व में जिसकी फैली छाया,
वह भारत है मेरा।।

विन्ध्याचल इसका कटिबद्ध है,
मेरुगिरी इसका माथा।
युगों-युगों से जुड़ी हुई है,
इसकी ही गौरवगाथा।।

हार हैं जिसकी गंगा-यमुना,
शुद्ध जो कण-कण को करती।
सूर्य चन्द्रमाँ चक्षु हैं इसके,
आँगन है जग की धरती।।

कन्या कुमारी चरण-चरण हैं,
घाट हैं इसकी जंघायें।
खेत हरे सोना हैं उगलते,
जहाँ जन्म ईश्वर पायें।।

लंका पुष्प चढ़ायें इसको,
मलय पवन पंखा झेलें।
झरने झर-झर गाते रहते,
शेरों से बालक खेलें।।

शिक्षा

शिक्षा क्या वह भर न सकी जो,
राष्ट्र भत्ति को जन - जन में ।
सम्मानित जीवन मानव का,
शक्ति नहीं क्या तन-मन में ।।

आदर का यदि भाव नहीं तो,
गूंगापन लिखाना पढ़ना ।
टूटा नेह का मन से बन्धन,
क्या जाने आगे चढ़ना ।।

मूल बिन्दु जीवन की निष्ठा,
संस्कारित एक अंश नहीं ।
बढ़ते-चढ़ते चरण-चरण पर,
गढ़े नहीं यदि वंश नहीं ।।

भाव स्वजन का क्षणिक नहीं,
डंस लेगा जन-जन को वह ।
भयभीत सभी उससे होंगे,
खटकेगा मन-मन को वह ।।

है कठोर पाषाण हृदय वह,
नित स्वदेश का प्यार नहीं ।
मानव क्या पाषाण खण्ड है,
जिसमे जीवन का सार नहीं ।।

जीवन वीणा

एक जीवन है ये वीणा, है अनेकों जिसमें तार ।
सभी गुणों से पूर्ण है यह, इसमें निहित अमृत धार ।।

है पड़ी यह सुप्त वीणा, तार नव झंकार झूलो ।
नाद अमृत से सना है, तुम नहीं क्षण एक भूलो ।।

हाथ पड़ता तार में जब, वह मधुर झंकार देता ।
द्रुत गति जाते पथिक को, शीघ्र ही यह रोक लेता ।।

चाहता है जो अमरता, पान रस इसका ही करता ।
पी सभी विष घूँट, अब कभी विष से न डरता ।।

खोजते क्यों बिन्दु रस को, है स्वयं में ढेर सारा ।
थाम लो वीणा मनोहर, तार ने तुमको पुकारा ।।

हाथ से छूकर सजाओ, यह मधुर झंकार धारा ।

मुग्ध कर लो जीव जन को, और प्राणी को भी सारा ।।

तुम्हीं वीणा, तुम्हीं वादक, लय से भी तुम स्वयं गाओ,
झंकारमय मधु गीत अपना, शीघ्र तुम जग को सुनाओ ।
उठ के तुम जग को सुनाओ ।।

आज

हल- चल चारों ओर मची है,
सदा सत्य आवाज दबी है ।।
भ्रम ने सबको घेर लिया है,
इसको हर जन देख रहा है ।।
हीन आचरण फैल रहा है,
उच्च आचरण मूक खड़ा है ।।
हर दिशा में स्वार्थ अड़ा है,
मांगों क ध्वजदण्ड खड़ा है ।।
लोभ व लालच और बढ़ा है,
अहम् का ज्वर भी तेज चढ़ा है ।।
ईमान धर्म सब खो बैठा है,
कर्त्तव्यनिष्ठ भी रो बैठा है ।।
चाहे नर हो चाहे नारी,
सबमें फैली त्राहि - त्राहि ।।
स्वयं सुरक्षित कोई न पाता,
बिछुड़ गया है रिश्ता नाता ।।
हीन भाव भी बढ़ता जाता,
हृदय स्वार्थ के गीत है गाता ।।
जो है संयमी घुटता जाता,
घुट-घुटकर कुछ कह न पाता ।।

कुछ कहता है यम है पीछे,
सब हैं ऊपर, स्वयं है नीचे ।।
अब तो इतना दबा पड़ा है,
श्वास भी उसका उखड रहा है ।।
कब तक ऐसा राज चलेगा,
ज्ञान नहीं कब श्वास मिलेगा ।।

धधकता हुआ दिल

धधकता हुआ दिल ये क्या कह रहा ।
क्यों आज शोषित लहू बह रहा ।।

स्वार्थों को लेकर जहां तुम लड़े थे ।
दूसरों पर ही प्रहार करने खड़े थे ।।

वर्ष बीते हैं जलते चिल्लाते हुये ।
स्वजन देखा तुमने बिलखाते हुये ।।

मूक क्रन्दन सुना पर मिटा दी आवाज ।
डूबने को जो आया है वृहद समाज ।।

खेद ! जलते हुए जन का दुःख ही नहीं ।
स्वयं भी कुचलकर लिया सुख वहीं ।।

आनन्द भी तुमने इसका ही लिया ।
सब अंकुर मिटाकर ही पानी पिया ।।

अश्रु भी तुमने इस पर खुशी के बहाये ।
भद्र बन करके ढोंगी, हमदर्द कहलाये ।।

27-03-2008

दैव से बढ़कर है तुममें दनुजता ।
तुम्ही कहते हो फिर, इसे ही मुनजता ।।

काटा गाजर सदृश तुमने जिसे ।
चिर वरं एक शोषित समझा इसे ।।

अब सोच लो ! कर्म तुमने क्या किया ।
सबको मिटा धर्म जग नाश प्याला पिला ।।

जीवन अर्पण

यह जीवन हो तुझको अर्पण माँ, तूने पाल बड़ा किया ।
उस देव तुल्य शैशवावस्था में, गोदी में तेरी दूध पिया ।।

धन्य समझता आज भाग्य को, देव भूमि में जन्म लिया ।
वही भूमि है जिसने जग में, देव पुरूष को जन्म दिया ।।

माँ बनकर पाला है तूने जन को जीवन दान रही ।
आज समर्पिण सब है तुझको, जो लगता है तुझे सही ।।

प्यार सदा ही करती रहती, कभी दु:ख न प्रकट किया ।
शिशु किशोर तरूणायी में भी, तूने हमसे कुछ न लिया ।।

गोद पकड़कर खेल खिलाकर, बड़ा हमें तूने ही किया ।
भरी अंजुली जल की तेरी, बून्द-बून्द हमने ही पिया ।।

बचपन भी मस्ती से गुजरा, गोदी में तेरी खेले ।
हमको तो प्रसन्न रखा पर, तूने कष्ट बहुत झेले ।।

पाल पोषकर बड़ा किया है, हम सब सेवक हैं तेरे ।
सेवा करने एक नहीं, शत-शत बालक तुझ को घेरे ।।

अन्न तेरा जलपान किया है, जीवन दान दिया तूने ।
उठा जगाकर खड़ा किया है, पड़े हुये थे जो सूने ।।

होकर लीन तुझमें माता मैं, जीवन अर्पण करता ।
सर्वस्व न्यौछावर बलिदान हेतु, तनिक नहीं मैं डरता ।।

बिखराव

मोती के दाने सब बिखरे पड़े हैं ।
दबाने को दुश्मनऽ हरगिज खड़े हैं ।।

नहीं मान होता अलग दाने का ।
अनुभव भी करता बिखर जाने का ।।
सदा ये रहे सामुहिकता से हट के ।
बिखराव के ये अँधेरे में भटके ।।
बिखरे थे जो तब वे बिखरे पड़े हैं ।
दबाने को दुश्मनऽ..........................।

टूटे पड़े सब एकत्रित करें हम ।
पड़ी इस शिथिलता में सहास भरें हम ।।
देखो नहीं आज भयभीत तम को ।
उजाला दिखाओ तुमी शीघ्र चमको ।।
ये कौन कोने में सोये पड़े हैं ।
दबाने को दुश्मनऽ हरगिज खड़े हैं ।।

27-03-2008

अभिन्न अंग जिसके ये मोती बने हैं ।
बिखरे पड़े वे कहां अब घने हैं ।।
करें अब निकटता इसी दूरता में ।
सभी को पिरोयें इसी सूत्रता में ।।
मुँह जो फिराये आपस में लड़े है ।
दबाने को दुश्मनऽ हरगिज खड़े हैं ।।

पिरोते रहें अब पिरोये इन्हें हम ।
बढ़ाते रहे आज हो पाये न कम ।।
यही हार बनकर संजोयेगी सपना ।
न होगा विभिन्न भारती देश अपना ।।
कहां बच सके वे जो कोने पड़े हैं ।
दबाने को दुश्मनऽ हरगिज खड़े हैं ।।

रखें ध्यान इतना रहें संगठित हम ।
एकात्म – अपनत्व – भ्रातृत्व हो सम ।।
रहे एक बनकर करो काम मिलकर ।
न बिखरो न टूटो आंधी से हिलकर ।।
जल्दी उठायें जो बिखरे पड़े हैं ।
दबाने को दुश्मनऽ हरगिज खड़े हैं ।।

वह रसधार नहीं

वह प्रेम मधुर रस धार नहीं है,
जो जन-जन तक ना पहुंच सके ।
वह शब्द नहीं कटु तीर सदृश है,
जो जन-जन हित के विपरीत झुके ।

वे चक्षु कहां हैं मानव के,
जिनमें समाज का दृश्य नहीं ।
क्या भाव समाया है उसमें,
जिसने देखा दुःख दर्द नहीं ।।

पौरुष, पौरुष युक्त नहीं,
जो शत्रु देखकर उबले ना ।
आवाज विहीन वह तरूण युवक,
अन्याय देखकर सम्भले ना ।।

उन्नत मस्तक उसे न कहते,
जो स्वार्थ क्षणिक में झुक जाता ।
दृष्टि विहीन वही मानव है,
जो अनोपचार लख रूक जाता ।

वह पांव नहीं जो मार्ग विकट में,
बढ़े न आगे हैं जाते ।
त्याग नहीं उस मानव में,
जो स्वार्थ छोड़ न दिखलाते ।

चिन्तन शून्य हैं वे सब जन,
जो मस्त हुये निज जीवन में ।
नहीं स्वयं हित उच्च हुयी है,
फूली-फली कली वन में ।।

हृदय नहीं उस मानुष में,
पीड़ित प्राणी को जो करता ।
घृणित पात्र तो बन जाता,
घुट-घुट कर वह है मरता ।।

अन्तर भी नर-पशु में यही है,
नर विवेक से करता काम ।
धर्म कर्म की सब बातों को,
सम्भल-सम्भल कर लेता थाम ।।

ज्ञान, संयम, धर्म पास नहीं हैं,
पशु पुच्छ विषाण बिना रहता ।
इच्छा जिधर उस दिशा में जाता,
'माऊँ-माऊँ' तो है कहता ।।

चिल्लाते पशु मुँह जैसे जो,
वे बात-बात में रोते हैं ।
संयम तो वे खो देते हैं,
फिर उदासीन सब होते हैं ।।

अन्तिम निर्णय अब सोच समझकर
मानव तुम्हें लेना होगा ।
संचित दिव्य गुणों को करके,
जन-जन को देना होगा ।।

एक क्षण भी ना थको

है अंधेरा यदि कहीं तो,
सूर्य से तुम तेज लो ।
हीन है जो दृष्टि से अब,
तुम उन्हें भी दृष्टि दो ।।

ज्ञान लो माँ शारदा से,
शीघ्र शिव की शक्ति लो ।
प्यार माँ से शीघ्र लेकर,
मीरा की तुम भक्ति लो ।।

चन्द्र से लें बिन्दु अमृत,
ले गुणों को राम के ।
शान्ति सुख दे जाते जग को,
वे ही गुण हैं काम के ।।

कृष्ण की उस नीति को भी,
ध्यान में हर क्षण रखो ।
प्रतिज्ञा प्रताप की लो,
एक क्षण भी ना थको ।।

तुम विवेकानन्द बनके,
चरित्रवान भी बन जाओ ।
महावीर की दया को समझो,
त्याग दधीचि का पाओ ।।

माँ

माँ ! शब्द कितना मधुर प्रिय बना ।
माँ से हमारा स्नेह भी घना ।।

जब जन्म लेता शिशु विश्व में भी,
माँ शब्द कहता अज्ञान में भी ।
ये शब्द साकार न है कल्पना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

पुकारे ये माँ ! तो माँ बोलती है,
गोदी पकड़ तब डोलती है ।
इसी राह होकर गया हर जना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

भूमि को यह जब 'माँ' बोलता है,
बन माँ का रक्षक यह डोलता है ।
बच्चा यहां है समर्पण का पन्ना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

परवाह किसने अपनी करी है,
सोचा था अपनी परीक्षा खरी है ।

संकट में माँ के हित ये बना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

सद्बुद्धि देती जो माँ शारदा है,
इसके बिना जग जीवन हारता है ।
सम्बन्ध प्रत्यक्ष नहीं है ये सपना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

संकट जो आये पुकार ही 'माँ' को,
साक्षात दुर्गा खड़ी है ये माँ तो ।
किसी ने कहां 'माँ' को देखा है छिपना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

तोड़ो ये सम्बंध जो बोलते थे,
षड़यन्त्रकारी युक्ति खोजते थे ।
सफल पूत का है वक्षस्थल तना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

यही शक्ति भरती हर जीव में है,
प्राणी का जीवन इसी नींव में है ।
कल्याणकारी माता को जपना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

किया पोष माँ ने हमको बड़ा अब,
बच्चा था नवजात गोदी पड़ा तब ।
तपी 'माँ' के हित अब सबको ही तपना,
'माँ' शब्द कितना ....।।

सींच लो हृदय कली !

सींच लो हृदय कली !
सींच लो हृदय कली !

क्यों खड़े हो मूक यों ही, शीघ्र अंजुलि जल भरो,
प्रेम श्रद्धा प्रेरणा से, तृप्त कण-कण को करो ।
स्नेह से बढ़कर न कोई, स्नेह पाने ये चली,
सींच लो हृदय कली !

ये न सोचो ये कली है, पूर्णता मुझमें सभी,
उभरकर आये वहीं से, थे तो अंकुर ये कभी।
अब करो पूरित गुणों से, जो उभरने है चली,
सींच लो हृदय कली !

प्रेरणा की इस किरण से, प्रकाश फैला दो सभी,
प्रेरणा से ना हो पूरित, आदर्श बनता न कभी ।
धैर्य से सिंचित करो अब, स्नेह जल में जो पली,
सींच लो हृदय कली !

खण्ड-२

बढ़ते कदम

बढ़ा है हिम्मत करके आगे,
हर पत्थर से टकराया ।
काँटों से भी छिद - छिद करके,
मेरा यह प्रिय महकाया ।।

कदम-कदम पर ठोकर खाई,
गिरा किन्तु फिर मुस्काया ।
कदम-कदम पर शूल मिले थे,
प्यार तो इनसे ही पाया ।।

कुचला है पैरों ने इसको,
कीचड़ में इसको डाला ।
स्वीकार किया पनपा ये वहीं,
कीचड़ ने इसको पाला ।।

खूब जलाया इसको सबने,
हुआ नहीं अंतिम तक राख ।
बढ़कर जलता सदा रहा ये,
मिटा न कोशिश करके लाख ।।

सम्मान नहीं इसने पाया,
बढ़े कदम पीछे न हटे ।
अंतिम इच्छा बनी रही,
भारत माँ पर शीश कटे ।।

तर पसीने से बदन था

सिर पर तेरे बोझ भारी,
तू व्यथित थी हो रही ।
पैर भू पर टिक न पाते,
होश भी थी खो रही ।।

तर पसीने से बदन था,
भीग श्वेताम्बर सभी ।
भागती तू इसलिये थी,
निकट था ना घर अभी ।।

लाल चेहरा हो गया है,
अरूण सा था लग रहा ।
चमचमाते मोती दाने,
था पसीना जो बहा ।।

गौर माथे पर ये काले,
बाल तेरे हिल रहे ।
खेलते थे ये पवन से,
तृण से भी मिल रहे ।।

27-03-2008

पांव में कम्पन थी तेरी,
किन्तु साहस कम नहीं ।
नित्य तू संघार्ष करती,
शेष हृदय तम नहीं ।।

प्रियतम दुःख

ठुकरा दो लाख-लाख तुम,
मैं पास तुम्हारे आऊंगा ।
दो खूब यातनायें मुझको,
मैं दूर कहीं क्या जाऊंगा ।।

तुमको मैं भूल नहीं सकता,
तुमने नित मेरा साथ दिया ।
निर्बल चाहे मैं सबल रहा,
फिर भी तुमने ही प्यार किया ।।

कहते हैं दुःख सब लोग तुम्हें,
तज दूर चले जाते हैं ।
है भाग्य बड़ा उन लोगों का,
जो सदा तुम्हें अपनाते हैं ।।

तुमने निश्छल नित नेह दिया,
अरू इसी भांति देते रहना ।
मेरे प्रिय हम तुम एक सखे,
सिखलाया तुमने सब सहना ।।

आगे बढ़ता-बढ़ता ही गया,
पर नाम लिया मैंने तेरा ।
अब टूट गया जग बन्धन भी,
है साथ सदा तेरा मेरा ।।

स्वच्छन्द रहा हूँ मैं तुमसे,
था बोझ कभी तुमने न दिया ।
मैं तो जहां-जहां भी गया,
तुमने पीछा भी वहीं किया ।।

अभिन्न अंग बन गये सदा,
बिछुड़ कहीं फिर ना जाना ।
दुनियाँ तुमको यदि रोके भी,
तुम चुप-चुप करके ही आना ।।

संसार तुम्हें यदि बुरा कहेगा,
बुरा कहूँ कैसे मैं कभी !
हर संकट में तुम साथ ही रहना,
मित्र रहेंगे बने तभी ।।

दु:ख नाम तुम्हारा विश्वख्यात,
है नाम हमारा दु:खी सदा ।
साथ हमारा नित्य रहेगा,
यही ईश ने भाग्य बदा ।।

दुनियाँ पागल होती है,
जब पास तुम्हारे आती है ।
पर मैं तुमको छोड़ूँ ना,
काया मेरी हर्षाती है ।।

पहले मुझको कुछ ज्ञान न था,
अक्षर तेरे बिलखाते थे।
पर सदा भटकती दिनचर्या,
तुम नये रूप में आते थे ।।

मुझे याद आती तेरी,
हर क्षण-क्षण में हर पल-पल में ।
पर मुझे शान्ति मिलती तुमसे,
जीवन की हर इक हलचल में ।।

जीवन मैं उसको कहता हूँ,
जो काँटों के उर लग जायें ।
हैं चरण नहीं रूकते मेरे,
जो साथ तेरे चढ़ते जायें ।।

आँसू सी है छाया तेरी,
नयनों में ज्योति बनी है जो ।
रूठो न कभी प्रिय क्षण-क्षण में,
मानो हीर कणी है जो ।।

जब कभी गर्व हो नश्वर को,
तुम आकर गले लगा लेना ।
नित नये मार्ग पर चलूँ सदा,
नयनों की ज्योति जला देना ।।

अज्ञानी हूँ कुछ ज्ञान नहीं,
मुझको बस ज्ञान रहा तेरा ।
है विकट अंधेरा घिरा यहां,
अब हाथ पकड़ लेना मेरा ।।

सच कहता हूँ हे प्रियतम मैं,
मैंने तुमको पहिचान लिया ।
है ज्ञान मुझे भी रहा यही,
मैंने तुमको भी जान लिया ।।

करबद्ध प्रार्थना करता मैं,
तुम नित अनुभव देते रहना ।
है अंधकार भी सघन यहां,
तुम दुःखी-दुःखी मुझको कहना ।।

27-03-2008

कुछ मेरी भी सुन लो

आप महान् थे और विद्वान् थे ।
पूज्य ज्ञानी थे तुम अन्तर्यामी थे ।।

लक्ष्य हर क्षण मन में था,
करना ही परहित काम ।
संसार चाहे जो भी कहे,
सेवा ही मेरा नाम ।।

परिवार को भूल ही गए,
मस्त हुये थे सेवा में ।
पूर्ण गुणों से पूरित थे,
मोह नहीं नरदेवा में ।।

चिन्ता नहीं की अपनी भी,
परिवार बोलता ही गया ।
ईश्वर के तुम प्रियजन थे,
छोड़ा नहीं ले ही गया ।।

जन-जन जिसको चाहता है,
अधिक दिन टिक नहीं पाता ।
जब चला जाता है वापस,
लौटकर नहीं आता ।।

विरोध सदा ही साथ रहा,
चुनौती देते गये सबको ।
कभी भी अप्रिय शब्द,
सुनने नहीं मिले हमको ।।

कहाँ भाग्य था तब मेरा,
रह पाता तुम्हारे पादों में ।
मूल्य नहीं उसका समझा,
आज पड़ा उन यादों में ।।

निश्चित आयेगा प्रिय तनय,
सोचा तो पल-पल में था ।
पुकार कहाँ सुनी मैंने,
मैं ऊबा दल-दल में था ।।

अन्तिम आवाज लगायी,
प्रिय बेटा तू है कहाँ ।
आखिरी श्वास टूटते भी,
मैं अबोध था नहीं वहाँ ।।

अंधकार में भटकता रहा,
ज्ञात था कुछ भी नहीं ।
जैसे मण्डूक कूप में घूमा,
सीमितता में वहीं-वहीं ।।

जाना तुम्हें था चले गये,
रहो सदा प्रसन्न कहाँ ।
अर्जित कुछ न कर सका मैं,
दुर्भाग्य मेरा यही रहा ।।

अज्ञानी पथ को भूल गया,
आया नहीं कभी भी पास ।
दे पाता जन को मैं भी कुछ,
यदि होता पास तुम्हारे काश ।।

अज्ञानता तो थी ही पर,
साथियों से था अधिक प्यार ।
साथी कहाँ मैं ढूँढ रहा,
स्वयं खड़ा हूँ जीवन हार ।।

सोचकर दु:खी मैं स्वयं,
जब अपने से होता हूँ ।
अपनी नासमझ समझता हूँ,
फूट - फूट कर रोता हूँ ।।

क्षमा मुझे कर दो हे श्रेष्ठ,
मैं था तब का शिशु नवजात ।
जानबूझकर नहीं हुआ,
यह हुआ है सब अज्ञात ।।

शब्द डांट के यदि मिलते,
निश्चित याद वे रह जाते ।
मार्ग विकट मिल जाने पर भी,
उठा अमर ये कर जाते ।।

हमने भी दुनियां ने जाना,
तुम्हें पण्डित के नाम से ।
मोह कहां किया तुमने,
संसार के काम से ।।

वाणी में ओजस्व अमृत था,
समझ न पाये इस सबको ।
सानिध्य में हम कहां रहे,
जानो बदकिस्मत हमको ।।

हे कली !

हे कली ! तू हरी रहती,
आश्रय उड़तों को देती ।
रूप सौंदर्य प्रेम से तू,
जीवन वन को मोह लेती ।।

झिलमिलता रूप तेरा,
मुग्ध करता मन सभी का ।
चूम तू चरणों में आती,
मूल को छूकर कभी का ।।

क्यों खड़ी अब हो गयी है,
मूक बनकर सामने ।
क्या खुशी थी तू बता दे,
जो लगी थी झूमने ।।

पास आया दूर से जो,
प्यार भी था कर रहा ।
चोंच अपनी मार तुझ पर,
खुश तुझे था कर रहा ।।

क्यों हिलोरें ले रही थी,
उच्च चोटी पर ही चढ़के ।
अफसोस ! निष्प्रिय बन गयी है,
मूक बन निस्तेज पड़के ।।

देखाते हैं नेत्र अगणित,
सोच ले तू झूम ले ।
तन सहारा ले पवन का,
थकते पथिक को चूम ले ।।

27-03-2008

कांटे

फूल खिलते रहते हैं,
महक देते रहते हैं ।
कांटे शान्त रहते हैं,
दामन थाम लेते हैं ।।

चुभता है कांटा पांव में,
ज्ञान कराता हृदय को ।
कहता कौन वह अज्ञानी,
कांटा दुष्ट है निर्दय तो ।।

रोककर कहना चाहता है,
अपने मन के भावों को ।
वह नहीं हम निर्दयी हैं,
कुचलते इनके ख्वाबों को ।।

ये तो मात्र इतना करता है,
प्यारा सा दर्द देता है ।
अडिग दृढ़ ये फिर भी रहता,
फटकार सभी की लेता है ।।

दर्द नहीं यह जागृति है,
छुपा है इसमें मोहक प्यार ।
मधुमय मधुर ये बन करके,
देते हैं सबको जीवन सार ।।

याद सभी करते हैं इनको,
पर घृणा का है यह मन ।
सोचते ये मात्र स्वयं की,
सुरक्षित रहे हमारा तन ।।

जिस पथ पर होते हैं कांटे,
उसे सब त्याग देते हैं ।
आत्मीयता उनकी देखो,
ये फैलने वहीं आते हैं ।।

बुरे नहीं हैं ये कांटे,
वे अपना बनाना चाहते हैं ।
हम बुरा बुरा कह करके,
दिल से ठुकराना चाहते हैं ।।

फूलों की तो राह जहां हो,
मस्त हुये सब जाते हैं ।
पड़ी नजर यदि कांटों पर,
लौट खड़े ये आते हैं ।।

सुगन्ध लिये ही सब मन में,
दुनियाँ को भूल जाते हैं ।
कांटे पकड़कर याद दिलाते,
तभी होश में आते हैं ।।

रुको ! रुको हे पथिक,
कहीं भूल न जाना अपनी राह ।
पूछ लेना मित्र कांटों से,
मन में भरी अपनी चाह ।।

ये भी तुम पूछ लेना उनसे,
राही से तुम लिपटते क्यों ।
क्यों पकड़ना चाहते हैं,
हम आगे बढ़ते हैं ज्यों ।।

क्या व्यथा है क्या बला,
हमारे इन मित्रों की ।
प्रत्यक्ष देख हम बात न करते,
करते बात इन चित्रों की ।।

क्यों ठुकराते इनको मानव,
ये मिट जायेंगे गम से ।
जिन फूलों को तुमने प्यार किया,
वे भी मिट जायेंगे मन से ।।

तुम उन्हें रोकोगे मानव,
ये रुक नहीं सकते ।
प्यार पर हो रहे प्रहार,
ये सह नहीं सकते ।।

बुरी दृष्टि से देखोगे,
पछताओगे आगे जाकर ।
घृणा तनिक न करो मित्र,
उन्हें प्यार करो आकर ।।

कुछ न कुछ देते ही हैं,
लेते नहीं वे कुछ हमसे ।
याचना करते रहते हैं,
स्नेह मात्र की वे सबसे ।।

अन्त में सुन लो प्रियजन,
बुरा नहीं जग में कोई ।
कांटे सभी के परम मित्र हैं,
अब जगा दे मति सोई ।।